मुक्ति

क्युं सोये थे पटरी पर.....
अकल घास चरने गई थी क्या.....
मर गये आखीर.....
यही कहोगे ना तुम.....
तुम्हें क्या वास्ता दे हमारे शरीर के बिखरे उन सभी
टूकडों का..... जो कल रात तक सारे एक थे मगर
बिखर रही थी हमारी आत्मा.....
तुम्हें क्या वास्ता दे उन थके पैरों और लडखडाती रुह का.....
जिन्हें पता ही कब रहा की भूखे-प्यासे मीलों चलते
चलते..... आधी रात को रेल की पटरी कब तकीया
बन गई थोडी देर सर टीकाने..... फिर उठके सुबह
खुद को अपने ही कंधों पे खींचने..... उस दुःस्वप्न
की ओर जो अस्तित्व को टटोलने के स्वप्न से
जोडने की उम्मीदें जगाये रखता है वक्त की हर
दहलीज और ठोकर के साथ भी..... आखिर, हम भी
ईन्सान है..... शायद हमारे नजरीये में.....
याहे आप का नजरीया और अंदाज अलग ही
क्युं न हो.....
खैर..... अभी जो तुम पटरी पे हमारे शरीर के टूकडों
के ईर्द-गीर्द बिखरी पडी रोटी की फोटो ले रहे हो,
वो हमनें बचाके रखी थी सुबह अपने आप को चंद
मील और खींचने..... क्या कहेते हो आप उसे ?
एक महीने से सून रहे थे वो शब्द..... हां, याद
आया..... ईम्युनीटी..... चलो, आखीर छूट ही गई वो.....
थोडी जल्दी ही सही.....
क्या कहते हो; नहीं की होगी कोशिश पटरी की
बजाय दूर के पथ्थर पे सोने की ? उसकी चुभनने

हमारे बच्चों के सर में जो तहलका मचाया उससे
उठके विकल्प ढूंढा रेल की पटरी का..... बस
दगा दे गई मीलों चलने की थकाने, जिसने
हमारे कानों को गाडी की आवाझ से भी बेहरा कर
डाला..... वरना हम सोये थे उठने के लिये.....
मगर..... आखिरी मकाम जो आना था.....
अगर ईसे ही आप मुक्ति कहेते हो तो.....
वैसे भी कहां पता था कब तक पहुंचेंगे.....
नहीं देना पडेगा अब जवाब भी उन मासूमों के
सवालों का जो हमारे साथ चल रहे थे और
छोटी उम्र में भी बोज कम कराने बारी बारी
कंधे बदलवाया करते थे.....
बस, एक गुझारीश है आप से.....
आज और आनेवाले दिनों में ऐसी कोई पटरी
पे हमारे टूकडे या हाईवे पे थक के खत्म हो के
गिरि हुई पूरी की पूरी बोडी भी मिले,
तो उसे वहां से हटाने में जरा सी भी
देरी मत करना..... क्योंकि जिंदा लाश
आपके विकासशील राष्ट्र की ईतनी इमेज
बाहरवालों के सामने ईतनी नहीं बिगाड सकती,
जितनी बीच रास्ते पडी उसी की
मरी लाश बिगाड सकती है, चाहे अंदर की
आत्मा एक ही..... क्यों न हो.....
बस आपका नाम और छबी खराब
नहीं होने चाहीए।

Dakshesh Pathak
9th May, 2020